आलेख

महात्मा गांधी और बाबासाहेब आंबेडकर

सूर्यनारायण रणसुभे

क्या माहात्मा गांधी और आंबेडकर वास्तव में एक दूसरे के विरोधी थे? दोनों के विचारों में क्या सचमुच विरोध था? क्या गांधी दलित-विरोधी थे? क्या गांधी सचमुच घोर सनातनी कर्मकांडी हिंदू थे? क्या वे आंबेडकर के विचारों और कार्यों के प्रति नफरत करते थे? क्या उन्होंने गांधी की प्रत्येक योजना का विरोध किया है? क्या आंबेडकर के मन में गांधी के प्रति किंचित भी आदर-भाव नहीं था? पुणे करार पर हस्ताक्षर करने के मूल में आंबेडकर की कौन-सी मजबूरी थी? इन प्रश्नों के उत्तर गांधी और आंबेडकर इन दोनों को एक दूसरे के विरोध में खड़ा करनेवालों को देने होंगे।



सूर्यनारायण रनसुभे
दलित साहित्य के प्रमुख चिंतक, चर्चित समीक्षक और अनुवादक। 'अनुवाद का समाजशास्त्र', 'हिंदी उपन्यास के पदचिह्न' आदि पुस्तकें।

इधर महाराष्ट्र में पिछले कुछ वर्षों में अध्येताओं ने इन प्रश्नों पर खोज करने का प्रयत्न किया है। इसके लिए स्रोत रूप में आंबेडकर जी और गांधी जी का लेखन उपलब्ध है। आंबेडकर अंग्रेजी और मराठी दोनों भाषाओं में लिखते थे। गांधी भी गुजराती और अंग्रेजी में लिखते थे। आंबेडकर के समस्त मराठी लेखन का हिंदी अनुवाद आज तक नहीं हो पाया है। परिणामस्वरूप हिंदी पट्टी के अध्येता और कार्यकर्ता यह नहीं जानते कि आंबेडकर ने समय-समय पर गांधी के आंदोलनों को लेकर कैसी प्रतिक्रिया दी है। इधर जो भी अनुसंधान हुआ है और हो रहा है उसके आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इन दोनों महामानवों का लक्ष्य एक ही था। प्रसिद्ध दलित नाटककार श्री दत्ता

भगत के शब्दों में 'भारत की राष्ट्रनिर्मिति का स्वप्न देखनेवाले महात्मा गांधी और बाबासाहेब आंबेडकर दोनों ही स्वतंत्रता आंदोलन में एक-दूसरे से स्पर्धा करनेवाले महान नेता थे- इसे समझ लेना जरूरी है। इस दृष्टि से लेखन करने की मेरी इच्छा है।' *(सक्षम समीक्षा : अक्तू/नवं/दिसं. 2017)* मराठी में उपलब्ध स्रोत सामग्री के आधार पर इन दोनों के संबंधों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न यहाँ किया जा रहा है।

(1) आंबेडकर पूरे देश में चर्चा का विषय बने महाड सत्याग्रह के कारण। यह सत्याग्रह महाड के नगरपालिका तालाब से अस्पृश्यों द्वारा पानी भरने के अधिकार के लिए किया गया सत्याग्रह था। इस सत्याग्रह के लिए जो मंडप डाला गया था और मंच बनाया गया था, उस मंच पर एक ही व्यक्ति का फोटो लगाया गया था और वह गांधी का था। यह घटना सन 1928 की है। *(डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे बहिष्कृत भारत आणि मूकनायक- महाराष्ट्र शासन, मुंबई 2008)* दूसरी बात अपने एक मराठी अग्रलेख में डॉ. बाबासाहेब ने यह लिखा है कि 'मैंने सत्याग्रह की कल्पना गांधी की ओर से ली है।'

(2) हिंदी के अधिकांश आंबेडकरवादी इस बात का बार-बार उल्लेख करते हैं कि डॉ. आंबेडकर ने गांधी को कभी भी 'महात्मा' नहीं कहा और न उन्होंने कभी उनके नाम के पूर्व महात्मा विशेषण का प्रयोग किया। इस बात में सचाई है कि आंबेडकर गांधी को मि. गांधी के रूप में ही संबोधित करते थे। विशेष रूप से दूसरे गोलमेज परिषद के बाद। परंतु यह स्थिति स्थायी नहीं थी। उसके बाद के उनके लेखन में उन्होंने कई स्थानों पर गांधी जी को 'महात्मा' शब्द से याद किया है। 'डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांचे समग्र साहित्य-खंड 18' के दोनों भागों में गांधी जी का उल्लेख कुल 52 बार आया है। वहाँ कई स्थानों पर उन्होंने गांधी जी को 'महात्मा' कहा



है। *(खंड 18 विभाग–2 पृ. 218, 219, 220–222 और 225)*

(3) जब डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अपने उन तमाम दलित बंधुओं को जो पीढ़ियों से गांवों में रह कर सवर्णों के यहाँ उनकी गंदगी साफ करने का काम कर रहे थे, मरे हुए जानवरों को उठा रहे थे, उनका मांस खा रहे थे– इसे मराठी में 'गावकीची कामे' कहा जाता है, इन कामों को पूर्णतः छोड़ देने का आग्रह किया तो इस आवाहन के कुछ ही दिनों बाद कुछ गांवों के वरिष्ठ दलित आंबेडकर से मिले। इन्होंने उनसे पूछा कि आप हमें गावकी के काम छोड़ने के लिए कह तो रहे हैं, पर पीढ़ियों से हम सवर्णों के जूठन पर जी रहे हैं, अगर हम ये काम छोड़ देंगे तो जीएंगे कैसे? परिवार का पोषण कैसे करेंगे? तब बाबासाहब ने 'जनता' साप्ताहिक में लिखा– 'जिस व्यवसाय में गंदगी नहीं है, अथवा जो व्यवसाय किसी विशिष्ट जाति का नहीं है ऐसा कोई व्यवसाय वे (दलित) कर सकें तो ठीक रहेगा। हमारे मतानुसार इस वक्त ऐसा ही एक व्यवसाय है और वह है खादी बेचने का। दलितों से मेरी व्यक्तिगत सिफारिश है कि वे खादी बुनने का काम करें। अब वे ऐसा सवाल उठाएंगे कि चरखे पर हम जो खादी बुनेंगे, उसे खरीदेगा कौन और उसे अगर कोई खरीद ही नहीं रहा हो तो फिर इसका क्या फायदा? इस समस्या को सुलझाना कठिन नहीं। दलितों को खुद को कपड़ा खरीदना ही पड़ता है। तो सभी दलित अगर खादी के कपड़े पहनना शुरू करें और दलितों द्वारा बुनी गई खादी को ही खरीदने का निर्णय बुनकर (क्योंकि वे भी दलित ही हैं) ले लेंगे, तो उन्हें बुनाई के धलों के लिए अन्यों के पास जाने की जरूरत नहीं। अर्थात इसके लिए थोड़ी बहुत राशि लगेगी, उसकी व्यवस्था सहजता से हो सकती है।' *(आंबेडकर यांचे बहिष्कृत भारत व मूकनायक सं. वसंत मून)*

यह सच है कि गांधी जी ने उपवास द्वारा आंबेडकर पर दबाव डाला, परंतु इस पर भी सोचना पड़ेगा कि गांधी जी ऐसा क्यों कर रहे थे?

यहाँ स्पष्ट कर देना जरूरी है कि उपर्युक्त कथन में जहाँ–जहाँ दलित शब्द का प्रयोग अनुवादक ने किया है, वहाँ–वहाँ मूल

मराठी में अर्थात आंबेडकर के मराठी लेखन में अस्पृश्य शब्द का प्रयोग हुआ है।

(4) 14 नवंबर 1956 को आंबेडकर नागपुर में अपने लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध धम्म में दीक्षित होनेवाले थे। उसके



एक दिन पूर्व इस धम्म परिवर्तन को लेकर उन्होंने एक पत्रकार परिषद बुलाई थी। उस पत्रकार परिषद में उनसे यह प्रश्न पूछा गया कि आपने बौद्ध धम्म को ही क्यों चुना? इस प्रश्न का विस्तार से उत्तर देते हुए उन्होंने कहा– अनेक कारणों में एक कारण यह भी है कि मैंने बापू को (वे अपने जीवन में गांधी के लिए दो बार बापू शब्द का प्रयोग करते हैं) यह आश्वासन दिया था कि मैं जब भी धर्म परिवर्तन करूंगा तब ऐसे ही धर्म को चुनूंगा जो इस देश में ही जन्मा है। *(धनंजय कीर लिखित 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की जीवनी')* धनंजय कीर बाबासाहेब आंबेडकर की जीवनी में लिखते हैं। 'अस्पृश्यता के प्रश्न संबंधी चर्चा करते समय मैंने एक बार गांधी जी से कहा था कि अस्पृश्यता की समस्या को लेकर मेरे और आपके बीच भले ही मतभेद हों, तो भी समय आने पर मैं इस देश को कम–से–कम खतरा हो ऐसा मार्ग चुनूंगा। इस कारण बौद्ध धम्म को स्वीकार कर मैं इस देश का अधिकाधिक हित कर रहा हूँ।' *(डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : धनंजय कीर)*

(5) जब अप्रैल 1948 में उन्होंने पुनर्विवाह किया, अंतरजातीय विवाह किया जो इस विवाह की निमंत्रण पत्रिका उन्होंने सरदार वल्लभभाई पटेल को– जो उन दिनों गृहमंत्री थे– भिजवा दी। सरदार ने इस अंतरजातीय विवाह के लिए शुभकामनाएँ देते हुए लिखा कि अगर आज बापू होते तो वे निश्चित ही इस विवाह में उपस्थित होते और आपको आशीर्वाद देते।

इसके उत्तर में बाबासाहेब ने सरदार को लिखा कि आप

यह सही कर रहे हैं। अगर बापू आज जीवित होते तो वे निश्चय ही हमें आशीर्वाद देते। *(जनता पत्रातील लेख : सं. अरुण कांबे)*

अगर सचमुच आंबेडकर के मन में गांधी जी के प्रति अनादर होता तो वे महाड सत्याग्रह के अवसर पर मंच पर गांधी की तस्वीर क्यों लगाते? अपने लेखों में वे अनेक स्थानों पर उनका संबोधन महात्मा के रूप में क्यों करते? धम्म-परिवर्तन के पूर्व बुलाई गई पत्रकार परिषद में वे गांधी जी को दिए गए शब्दों का पुनरुच्चार क्यों करते? और अंत में सरदार वल्लभभाई के पत्र के उत्तर में यह क्यों लिखते कि बापू आज होते तो वे हमें निश्चित ही आशीर्वाद देते। वे दलित-बंधुओं से चरखा कातने और खादी के कपड़े पहनने के लिए क्यों कहते? ये सारे प्रमाण उनके लेखन से ही लिए गए हैं।

'इन दिनों मेरा अधिकांश समय गांधी जी की अस्पृश्यता निवारण से संबंधित निवेदनों को पढ़ने में जाता है। इन निवेदनों में व्यक्त विचारों को पढ़ कर लगता है कि गांधी जी के विचारों में कितनी बड़ी क्रांति हुई है। गांधीजी को अब हम अपना आदमी कहेंगे।'

पुणे करार को बार-बार उछाला जाता है कि गांधी जी ने उपवास द्वारा आंबेडकर पर दबाव डालकर करार को अपनी इच्छानुकूल बदलने के लिए मजबूर किया। यह सच है कि गांधी जी ने उपवास द्वारा आंबेडकर पर दबाव डाला। परंतु इस पर भी सोचना पड़ेगा कि गांधी जी ऐसा क्यों कर रहे थे? इसके मूल में उनकी क्या दृष्टि थी? इस पर मैं यहाँ कोई टिप्पणी देना नहीं चाहता, क्योंकि इस संबंध में संक्षिप्त टिप्पणी द्वारा बात स्पष्ट नहीं होगी। इस पर कभी स्वतंत्र रूप से मैं लिखूंगा।

यहाँ मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि आंबेडकर जी द्वारा गांधी के प्रस्ताव को स्वीकार करने के मूल में उनकी पराजय नहीं थी, अपितु दलितों के व्यापक हित की दृष्टि इसके मूल में थी।

गांधी जी के उपवास के कारण पूरे देश में विस्फोटक

स्थिति निर्माण हो चुकी थी। आंबेडकर समझौते के लिए तैयार नहीं थे। उपवास की अवधि बढ़ चुकी थी। गांधी जी का स्वास्थ्य पूरी तरह गिर चुका था। डॉक्टरी रिपोर्ट बतला रहे थे कि अगर उपोषण अगले 36–48 घंटे चला तो गांधी जी बच नहीं सकते। गांधी जी की इस मरणप्राय अवस्था के लिए आंबेडकर जिम्मेदार हैं– यह संदेश तो देश भर में चला गया था। ऐसी स्थिति में अगर आंबेडकर समझौता न करते तो दलितों को इसकी क्या कीमत चुकानी पड़ती– इसे बाबासाहेब समझ रहे थे। अगर इस कारण गांधी जी की मृत्यु हो गई तो पूरे देश के सवर्ण और बहुजन अपना गुस्सा दलितों पर उतारेंगे, उनकी बस्तियाँ जलाई जाएंगी, उनकी सामूहिक हत्या होगी।

बाबासाहेब जिंदगी भर दलितों की भलाई के लिए संघर्षरत थे। अगर गांधी जी की मृत्यु हो गई तो, देश में मानो गृहयुद्ध ही शुरू हो जाएगा और सत्ताधारी अंग्रेज इस तमाशे को देखते हुए चुप नहीं बैठेगा, क्योंकि उसकी यही इच्छा है कि ये लोग आपस में लड़ें, ताकि वह यह घोषित कर सके ऐसी स्थिति में वे स्वतंत्रता नहीं देंगे।

आंबेडकर नहीं चाहते थे कि अंग्रेजों को यह अवसर मिले और न ही वे यह चाहते थे कि गांधी की मृत्यु के लिए दलित समाज को जिम्मेदार ठहराया जाए। समझौते के इन मूल कारणों तक जाने के बाद ही स्थितियाँ स्पष्ट हो सकती हैं। आंबेडकर जी की दूरदृष्टि का प्रमाण सन 1948 में गांधी हत्या के बाद मिला। गांधी का हत्यारा एक ब्राह्मण है– ऐसा संदेश जाने के बाद महाराष्ट्र के अधिकांश हिस्सों में ब्राह्मणों की बस्तियों में आग लगाई गई। शहरों, कस्बों में स्थित उनके मकानों को लूटा गया, आग लगा दी गई।

दूसरी बात आंबेडकर ने पुणे करार पर हस्ताक्षर करने के पूर्व अपनी नई मांगें गांधी जी से मनवा लीं। पुणे करार का मूल मसौदा तथा समझौते के बाद का मसौदा– इन दोनों का तुलनात्मक अध्ययन महाराष्ट्र के एक अध्येता वसंत पलशीकर ने किया है। अपने अध्ययन द्वारा उन्होंने यह प्रमाणित किया है कि मूल मसौदे से भी अधिक संख्या में प्रतिनिधित्व की मांग आंबेडकर ने की और गांधी जी इसके लिए तैयार हुए।

पुणे ऐक्ट के बाद गांधी और आंबेडकर के विचारों में बुनियादी परिवर्तन होने लगता है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण आंबेडकर द्वारा लिखे एक मराठी पत्र में मिलता है :

'इन दिनों मेरा अधिकांश समय गांधी जी की अस्पृश्यता निवारण से संबंधित निवेदनों को पढ़ने में जाता है। इन निवेदनों में व्यक्त विचारों को पढ़ कर लगता है कि गांधी जी के विचारों में कितनी बड़ी क्रांति हुई है। गांधीजी को अब हम अपना आदमी कहेंगे। क्योंकि वे अब हमारी भाषा और हमारे विचार व्यक्त कर रहे हैं। अस्पृश्यों के दुखों का गांधी जी ने एक निवेदन में जो यथार्थ वर्णन किया है, वह पढ़ते समय मुझे ऐसा लगा कि मैं 'बहिष्कृत भारत' या 'समता' में छपे अपने पत्रों के कुछ लेखों का अंग्रेजी अनुवाद ही मानो पढ़ रहा हूँ।'

बाबासाहेब आंबेडकर संविधान सभा में न आएं, इसलिए गांधी जी के इशारे पर तत्कालीन कांग्रेस नेतृत्व ने उनके मतदाता संघ को जानबूझ कर नवनिर्मित पाकिस्तान में डाल दिया। अंग्रेजों ने जब बाबासाहब को संविधान सभा में लेने हेतु दबाव डाला, तब मजबूरी में कांग्रेस ने उन्हें मुंबई से चुन कर लाया और मसौदा समिति का उन्हें अध्यक्ष बनाया। इस प्रकार का जो प्रचार बामसेफ करती है– वह पूर्णतरह झूठ, अनैतिहासिक और काल्पनिक है। यह प्रचार वास्तव में नाथूराम गोडसे की प्रवृत्ति को बल देनेवाला है। इतिहास ऐसा नहीं है। इतिहास यह है– 'देश के नेताओं के सामने सवाल यह था कि आजादी तो मिल गई, किंतु अब संविधान बनाने की दृष्टि से क्या किया जाए? संविधान से संबंधित एक भी विशेषज्ञ उन्हें नजर नहीं आ रहा था। इस संदर्भ में सुविख्यात पत्रकार पद्मभूषण अक्षयकुमार जैन का उल्लेख महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। जवाहरलाल नेहरू और सरोजिनी नायडू एक दिन महात्मा जी से मिलने गए। नेहरू जी कुछ चिंतित और उदास दिखाई दे रहे थे। महात्मा जी द्वारा इसका कारण पूछने पर पंडित जी ने कहा कि भारत का संविधान बनाने के लिए एक विशेषज्ञ की आवश्यकता है। एशिया द्वीप के कुछ देशों के संविधान निर्माता सर आयव्हर जेनिंग्ज को इस कार्य हेतु बुलाए जाने की बात कुछ लोगों द्वारा उठाई गई है। तब महात्मा जी ने नेहरू जी से

उल्टा सवाल किया कि हमारे देश के ही एक संविधान विशेषज्ञ भीमराव आंबेडकर का नाम उनके ध्यान में क्यों नहीं आया। *(संदर्भ– प्रज्ञासूर्य डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, संपादक– डॉ. शरण कुमार लिंबाले– 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर और भारतीय संविधान' – ले. रमेश शिंदे)*

गांधी जी का इतना इशारा काफी था। जिस कांग्रेस ने शुरू में आंबेडकर का विरोध किया था, उसी कांग्रेस ने– गांधी जी के इशारे पर– राजेंद्र प्रसाद और वल्लभभाई पटेल ने महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बालासाहेब खेर को सूचित कर उनके माध्यम से बाबासाहब को निर्वाचित किया। मुख्यमंत्री खेर जी ने संविधान सभा के एक सदस्य बॅ. जयकर को त्यागपत्र देने के लिए कहा और उनके रिक्त स्थान पर आंबेडकर को चुन कर लाया गया। क्या इस इतिहास को हम नकारेंगे?

एक अन्य प्रसंग में स्वयं नेहरू जी के सेक्रेटरी एम.ओ. मथाई ने बताया है। वे एक बार आंबेडकर जी से मिलने गए। बहस में रंग आने पर आंबेडकर बोले– 'हिंदुओं को महाभारत की जरूरत थी तब उन्हें व्यास मिला। वह शूद्र था। रामायण के लिए वाल्मीकि को बुलाया गया। वह भी शूद्र। और अंत में हिंदुओं को संविधान की जरूरत पड़ी तो मुझे बुलाया गया, मैं भी शूद्र।' तब मैंने डॉ. आंबेडकर को यह याद दिलाया कि मंत्रिमंडल में आंबेडकर को लिए जाने का सुझाव पं. नेहरू को गांधी जी ने दिया और उसी आंबेडकर ने आगे चल कर संविधान समिति में संविधान का विधेयक प्रस्तुत किया। *('प्रज्ञासूर्य– सं. डॉ. शरण कुमार लिंबाले')*

संविधान सभा में डॉ. बाबासाहब का पहला भाषण 9 दिसंबर 1946 को हुआ। उनके इस पहले भाषण से गांधी जी और तत्कालीन कांग्रेस नेतृत्व आश्चर्यचकित हुआ, क्योंकि यह भाषण देशप्रेम और राष्ट्रीयता से भरा हुआ था। इस भाषण के कारण बाबासाहेब के प्रति कांग्रेस का दृष्टिकोण ही बदल गया। गांधी जी के दृष्टिकोण में बहुत पहले ही– पुणे करार के बाद परिवर्तन हो चुका था। एक स्थान पर गांधी जी ने लिखा है कि आंबेडकर जी की राष्ट्रीयता सौ प्रतिशत खरी है। वे सच्चे राष्ट्रहित चिंतक हैं। अगर बाबासाहेब मेरे मुंह पर

थूकें और मुझे जूते से पीटे तो भी मैं बुरा नहीं मानूंगा, क्योंकि हम लोगों ने उन पर और उनके समाज पर इतना अन्याय किया है कि उसकी क्षतिपूर्ति संभव नहीं हैं।'

आंबेडकर का एक प्रसिद्ध भाषण है– रानडे, गांधी और जिन्ना। बाद में यह पुस्तक रूप में छपा। इसकी प्रस्तावना में उन्होंने स्पष्टता के साथ कहा है– 'गांधी या जिन्ना के प्रति मेरे मन में कोई द्वेष या ईर्ष्या नहीं है। ...मैं व्यक्ति से अधिक अपने देश से प्रेम करता हूँ।' *(डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, म. गांधी और बॅ. जिन्ना : डॉ. गंगाधर पानतावणे– प्रज्ञासूर्य)*। निश्चय ही गांधी–आंबेडकर का संघर्ष उनका व्यक्तिगत संघर्ष कभी नहीं था, बल्कि वह वैचारिक था।

पुणे करार के बाद गांधी जी ने 'हरिजन' पत्रिका अंग्रेजी और हिंदी में शुरू की। इसके पहले अंक के लिए गांधी जी ने आंबेडकर जी से संदेश मांगा। यह घटना 1933 की है। इस संदेश में आंबेडकर ने लिखा– 'अस्पृश्यता वर्ण व्यवस्था का उत्पादन है। जब तक वर्णव्यवस्था है, तब तक अस्पृश्यता रहेगी इस वर्णव्यवस्था को नष्ट किए बगैर अस्पृश्यता सच्चे अर्थों में खत्म होनेवाली नहीं है। *(राष्ट्रपिता : मधु लिमये)* उनके इस संदेश का प्रतिवाद गांधी जी ने अपने संपादकीय में नहीं किया है। इसका सीधा अर्थ है कि गांधी जी आंबेडकर के विचारों से सहमत थे। इस सहमति के अनेक प्रमाण गांधी जी की 1935 के बाद की विचारधारा में मिलते हैं।

हम इस बात को क्यों समझ नहीं पा रहे हैं कि गांधी और आंबेडकर– इन दोनों महामानवों का व्यक्तित्व निरंतर विकसनशील रहा है। वे किसी एक विचार को लेकर दृढ़ नहीं हैं। गांधी जी निरंतर कहा करते थे कि मैंने जो कल कहा है उसे भूल जाइए, मैं जो आज कह रहा हूँ वह आज का सत्य है। जरूरी नहीं कि वह कल का भी सच हो। बाबासाहेब आंबेडकर ने एक स्थान पर लिखा है कि अपरिवर्तनशीलता पत्थर का गुणधर्म है। मनुष्य तो निरंतर बदलता रहता है, बदलते रहना चाहिए।

यह बहुत बड़ी सच्चाई है कि गांधी बाबासाहेब के विचारों के कारण बदलते गए हैं। उनके विचार अधिक व्यापक होते

गए हैं। जीवन के आरंभ के वर्षों में वे जाति-व्यवस्था के कट्टर समर्थक थे। अंतरजातीय विवाह का उन्होंने कड़े शब्दों में निषेध किया है। वही गांधी जी जीवन के उत्तरार्ध में अंतरजातीय विवाह के कट्टर समर्थक बन गए। उनके इस बदलाव के मूल में आंबेडकर की पुस्तक 'इनहिलिशन ऑफ कास्ट' रही है। इस मामले में वे इतने कट्टर हो गए कि अपने मानसपुत्र महादेव भाई देसाई के बेटे की शादी में वे इसलिए सम्मिलित नहीं हुए, क्योंकि वह जाति के अंतर्गत विवाह था। गांधी ने अपने एक बेटे का विवाह अंतरजातीय ही किया था। (वैश्य-ब्राह्मण) और आंबेडकर ने भी जीवन के उत्तरार्ध में अंतरजातीय विवाह ही किया था।

अंतरजातीय विवाह से ही जातिप्रथा का अंत होगा- ऐसा दृ ढ़ विश्वास इन दोनों को हो गया था। जातियाँ नष्ट करने का अर्थ ही था वर्ण व्यवस्था को नष्ट करना। बकौल दत्ता भगत के, अब वर्ण रहे ही कहाँ! इस देश में अब वर्ण का अस्तित्व नहीं है- अस्तित्व है तो सिर्फ 'जातियों' का। इस कारण जातियों के अंत का अर्थ है वर्णव्यवस्था को नष्ट करना। जब गांधी जी अंतरजातीय विवाहों पर इतना बल दे रहे थे तो फिर उन्हें वर्णव्यवस्था का समर्थक कैसे कहा जा सकता है?

गांधी और आंबेडकर के विचारों और आचरणों में भी कई स्थानों पर अद्‌भुत समानता है। खुद को सनातनी हिंदू कहलानेवाले गांधी पूरे जीवन में किसी भी मंदिर में नहीं गए। किसी भी धर्मप्रमुख से वे खुद जाकर नहीं मिले। उनके किसी भी आश्रम में किसी भी दीवार पर किसी भी भगवान की तस्वीर नहीं है। वे प्रार्थना भी करते थे तो खुले में।

आंबेडकर भी जीवन में किसी मंदिर में श्रद्धावश नहीं गए। अलबत्ता उन्होंने कालाराम मंदिर प्रवेश का आंदोलन किया, दलितों को उनके अधिकार दिलाने के लिए। गांधी जी ने भी दलितों के मंदिर प्रवेश का खुल कर समर्थन किया। बावजूद इसके कि वे मंदिरों को देवताओं का निवास नहीं मानते थे।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारतीय संविधान का पूरा मसौदा अकेले बाबासाहेब आंबेडकर ने तैयार किया। हालांकि मसौदा समिति में कुल सात सदस्य थे। संविधान लेखन समिति

के एक सदस्य टी टी कृष्णम्माचारी ने पांच नवंबर 1948 के अपने भाषण में कहा था– 'यह सभागृह इस बात से परिचित है कि लेखन समिति के कुल सात सदस्यों में से एक ने त्यागपत्र दिया। उनकी जगह भरी नहीं गई। एक सदस्य की मृत्यु हो गई। उसकी भी जगह खाली है। एक सदस्य अमेरिका गए, उनका स्थान भी रिक्त है। चौथे सदस्य रियासत संबंधी कार्य में उलझे हुए हैं, इस कारण उनकी सदस्यता नाममात्र है। एक-दो सदस्य दिल्ली से बहुत दूर हैं। उनकी तबीयत बिगड़ जाने के कारण वे लेखन समिति की बैठकों में उपस्थित ही नहीं हो सके। अतः हुआ यह कि संविधान लेखन की सारी जिम्मेदारी अकेले आंबेडकर को ही संभालनी पड़ी। ऐसी स्थिति में उन्होंने जिस परिश्रम से काम किया, उस कारण वे इस सभागृह के आदर के पात्र हैं। राष्ट्र उनका सदैव ऋणी रहेगा।' (डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : धनंजय कीर)

गांधी और आंबेडकर की जयजयकार करनेवाले उनके अनुयायियों से यह प्रश्न पूछने की इच्छा होती है कि क्या वे इन दो महामानवों के रास्ते पर चल रहे हैं?

29 अगस्त 1947 के दिन संविधान समिति ने संविधान का मसौदा तैयार करने हेतु एक लेखन समिति गठित की। इस लेखन समिति के अध्यक्ष पद का सम्मान बाबासाहेब आंबेडकर को दिया गया। 29 अगस्त 1947 से लेकर 26 नवंबर 1949 तक संविधान के मसौदे पर बहस होती रही। अगस्त 1947 से जनवरी 1948 तक संविधान की अधिकांश धाराएँ पारित हो चुकी थीं। इनमें मुख्य रूप से अस्पृश्यता निर्मूलन, आरक्षण, राष्ट्रध्वज पर धम्मचक्र आदि की व्यवस्था आंबेडकर कर सके, इसका एकमात्र कारण था उन्हें इस कार्य में गांधी और नेहरू का पूर्ण सहयोग प्राप्त था। ध्यान दें कि उस समय संविधान सभा के सदस्यों की कुल संख्या 324 थी। करीब 82% सदस्य गांधी और नेहरू के नेतृत्व को स्वीकार कर चुके थे। अगर गांधी जी दलित-विरोधी होते, आंबेडकर विरोधी होते,

वे अगर थोड़ा सा भी इशारा कर देते तो इनमें से कई प्रावधानों को पारित करना संभव ही नहीं था। संविधान के निर्माण में बाबासाहेब का सौ प्रतिशत योगदान है– इसमें संदेह नहीं। परंतु इन प्रावधानों को पारित करवाने में गांधी और नेहरू की भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण रही है। गांधी की हत्या के बाद अलबत्ता संविधान में जिन प्रावधानों की व्यवस्था आंबेडकर करना चाह रहे थे, उसे वे कर नहीं सके। अगर गांधी जीवित होते तो हिंदू कोड बिल भी आसानी से पारित हो सकता था। इसलिए संविधान निर्माण में गांधी का अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग रहा है। आंबेडकर द्वारा लिखित संविधान मूर्त रूप में आ सका, इसके लिए संविधान सभा के सभी सदस्य और गांधी का सहयोग भी उतना ही महत्वपूर्ण रहा है। इसे ध्यान में रखना जरूरी है।

संविधान के निर्माण में बाबासाहेब का सौ प्रतिशत योगदान है– इसमें संदेह नहीं। परंतु इन प्रावधानों को पारित करवाने में गांधी और नेहरू की भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण रही है।

आंबेडकर और गांधी की आयु में 22 वर्षों का अंतर था। इन दोनों का संघर्ष वास्तव में दो पीढ़ियों के बीच का संघर्ष था। गांधी की तुलना में आंबेडकर बहुत युवा थे और इस कारण आक्रामक थे। पर दोनों एक दूसरे के पूरक भी थे। आंबेडकर बहुत आरंभ से जातिविहीन भारतीय समाज का स्वप्न देख रहे थे। इस स्वप्न को साकार करने हेतु उन्होंने अंतरजातीय विवाह का उपाय सुझाया। उनके 'इनहिलिएशन ऑफ कास्ट' को श्री मधु लिमये फ्रेंच राज्यक्रांति के बाद का विश्व का सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानवमुक्ति का घोषणापत्र मानते हैं। *(राष्ट्रपिता, श्री मधु लिमये)* गांधी जी भी जीवन के उत्तरार्ध में जातिविहीन भारत का स्वप्न देख रहे थे। और इसकी पूर्ति के लिए वे आंबेडकर द्वारा सुझाए मार्ग को स्वीकार कर चुके थे। इसलिए रावसाहब कसबे ने कहा कि गांधी अपने जीवन के अंतिम मोड़ पर आंबेडकर बन गए और आंबेडकर गांधी बन गए। वह इस अर्थ में कि गांधी आंबेडकर जी के रास्ते पर चलने लगे और आंबेडकर अहिंसा और करुणा के मार्ग पर। हालांकि यह मार्ग उन्होंने गौतम बुद्ध से

स्वीकारा था। पर गांधी आरंभ से इसी मार्ग पर ही तो चल रहे थे। दोनों ने एक दूसरे के मार्गों को स्वीकारा था। बावजूद इस सारे यथार्थ के -क्या हम अभी भी यह कह पाएंगे कि दोनों एक-दूसरे के शत्रु थे। गांधी और आंबेडकर का अलग-अलग जयजयकार करनेवाले उनके अनुयायियों से यह प्रश्न पूछने की इच्छा होती है कि क्या वे इन दो महामानवों के रास्ते पर चल रहे हैं? भारतीय दलित कवि अपनी कविताओं में जाति व्यवस्था की अमानवीयता पर प्रहार करते हैं, जातिविहीन समाज का स्वप्न देखते हैं। परंतु इनमें से कितने हैं जो अपने बेटे-बेटियों के विवाह अंतरजातीय करने में उत्सुक हैं? उल्टे, वे अपनी-अपनी जातियों और उपजातियों के कोश से बाहर निकलने को तैयार नहीं हैं। क्या सभी दलित जातियाँ एक हो चुकी हैं? क्या उनमें अंतरजातीय विवाह हो रहे हैं? उधर सवर्ण गांधी भक्तों से भी यही सवाल पूछा जा सकता है। केवल उन महामानवों के जयजयकार से बात नहीं बनेगी। उनके द्वारा दिए गए कार्यक्रम को कार्यान्वित करने से ही उनके प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त की जा सकती है।

बाबासाहेब और गांधी जी व्यक्ति-पूजा के घोर विरोधी थे। बाबासाहेब ने संविधान सभा के अंतिम भाषण में बढ़ती व्यक्ति-पूजा का घोर विरोध किया था। उनका इशारा गांधी-भक्तों की ओर था। इन दोनों के चले जाने के बाद उनके अनुयायी उनकी पूजा में ही जुट गए। सत्ताधारियों ने पूरी धूर्त्तता के साथ इनकी मूर्तियाँ बनानी शुरू की। उनकी मूर्तियों की मांग भी होने लगी। आंबेडकर अगर जीवित होते तो वे कहते कि प्रत्येक दलित बस्ती में ग्रंथालय-वाचनालय खोले जाने चाहिए, न कि पुतले या चौक का नामकरण तक उन्हें सीमित रख दिया जाए। किसी भी स्थिति में इन दोनों महामानवों के मुख्य कार्यक्रम अंतरजातीय विवाह को बढ़ावा न मिले, ऐसी कोशिश सत्ताधारी और इन दोनों की भक्त मंडलियाँ कर रही हैं।

गांधी और आंबेडकर को एक दूसरे के विरोध में खड़ा करने से कुछ राजनीतिक पार्टियों, संगठनों को फायदा हो रहा होगा, परंतु इस देश के भविष्य का जो स्वप्न इन दो महामानवों ने देखा था, उसकी पूर्ति कभी नहीं हो सकती।

जरूरत इस बात की है कि इन दोनों में जो वैचारिक विरोध था, उस पर अधिक बल देने के बजाए इन दोनों में जो साम्य था, उस पर बल दिया जाए। दोनों के विचारों को, दोनों के प्रति पूर्ण श्रद्धा

रखते हुए स्वीकारने से ही इस देश का सुंदर भविष्य आकार ले सकता है।

ध्यान रखें कि जो मनुवादी वृत्ति के लोग हैं, जो धर्म को केंद्र में रख कर इस देश को एक धर्म की पहचान देना चाह रहे हैं, –वे इन दोनों का उपयोग अपनी विचारधारा को, अपनी पार्टी को मजबूत करने के लिए कर रहे हैं। वे गांधी को स्वच्छता के प्रतीक के रूप में और आंबेडकर और सरदार वल्लभभाई को मूर्तियों तक सीमित करने निकले हैं। ऐसे में संवेदनशील, प्रगतिशील गांधीवादी और आंबेडकरवादियों की यह नैतिक जिम्मेदारी बन जाती है कि वे गांधी, आंबेडकर का फ्यूजन कर जातिविहीन और धर्मनिरपेक्ष भारत का उनका सपना पूर्ण करने की दिशा में आगे बढ़ें। सौभाग्य से मराठी के बुद्धिजीवी इस दृष्टि से अनुसंधान कर के लिख रहे हैं। रावसाहेब कसबे, दत्ता भगत, उत्तम कांबे, हरि नरके तथा सुरेश द्वादशीवार का लेखन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

अंतरजातीय विवाह को प्रत्यक्ष कार्यरूप में लाए बगैर जातिविहीन समाज की संभावना ही नहीं है। इसे इन दोनों महामानवों ने पहचाना था। इस दिशा में हम क्या कर रहे हैं?

दक्षिण भारत में मार्क्स और आंबेडकर के विचारों में साम्य बतलाने की दृष्टि से कार्य हो रहा है। उसका भी अपना महत्व है। सवाल है कि हिंदी पट्टी के दलित नेता, कवि, बुद्धिजीवी इस दिशा में क्या कर रहे हैं? अंतरजातीय विवाह को प्रत्यक्ष कार्यरूप में लाए बगैर जातिविहीन समाज की संभावना ही नहीं है। इसे इन दोनों महामानवों ने पहचाना था। इस दिशा में हम क्या कर रहे हैं? किसी भी स्थिति में इन दोनों महामानवों को प्रतिक्रियावादियों के चंगुल से बाहर निकालना है। इन दोनों की पूजा ने मानसिकता से बाहर निकलना जरूरी है।

बाबासाहब आंबेडकर आरंभ से ही समाजवादी विचारों के थे। जीवन के अंत में रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना के लिए उन्होंने जिन्हें पत्र लिखे हैं, उनमें राममनोहर लोहिया तथा एस. एम. जोशी प्रमुख थे। वे सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक शोषण के विरोध में थे। मार्क्स का सारा दर्शन ही शोषण से मुक्ति के लिए

खड़ा है। गांधी भी शोषण के विरोध में बोल रहे थे, लिख रहे थे। यह दूसरी बात है कि शोषण के विरोध का उनका दर्शन अति आदर्शवादी था। वे मनुष्य के विवेक का आवाहन कर रहे थे। वे व्यक्ति के हृदय परिवर्तन पर बल दे रहे थे। मार्क्स व्यक्ति की अपेक्षा समूह को शोषण के विरोध में संगठित होने के लिए कह रहे थे। तो बाबासाहेब शोषण मुक्त तथा वर्ण और जातिमुक्त समाज के लिए 'पढ़ो, संगठित हो जाओ और संघर्ष करो' का नारा दे रहे थे। तीनों का लक्ष्य एक ही था– समाज की आखिरी सीढ़ी पर बैठे हुए मनुष्य को अधिक समृद्ध, अधिक सुदृढ़ और अधिक स्वाभिमानी बनाना।

इसलिए भारत के उज्ज्वल भविष्य निर्माण के लिए इन तीनों के विचारों में समन्वय करने की जरूरत है। यह इस युग का तकाजा है। इन तीनों के विचारों में समन्वय स्थापित करते हुए ही हमें आगे बढ़ना होगा।

26 अक्तूबर 1938 को बाबासाहेब ने कहा था– 'हम लोगों में एक दोष यह है कि एक बार विवाद या झगड़ा हुआ कि उसे पीढ़ी–दर–पीढ़ी जारी रखने का पागलपन है। विचारों की प्रस्तुति कालानुरूप होनी चाहिए।' *(डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – खंड 18)*

'निकष', 19–अजिंक्य विला, अजिंक्य सिटी, अंबाजोगाई रोड,
लातूर–413512 (महाराष्ट्र) मो.9423735393

